

श्रीमद्भागवत नवम स्कन्ध अध्याय 10: भगवान् राम

22 September 2026

पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



चौदह वर्षों के पश्चात् अयोध्या लौटकर, भगवान् रामचन्द्र सीता को अपने पास और अपने भाइयों तथा भक्त सेवकों को समीप रखकर सिंहासन पर विराजते हैं — उस युग का उदय जो सदा राम-राज्य, परम शासन, के रूप में स्मरण किया जाता है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवत विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं एवं शिक्षाओं की एक श्रद्धापूर्ण यात्रा। नवम स्कन्ध का यह दसवाँ अध्याय भगवान् रामचन्द्र की सम्पूर्ण कथा — स्वयं परम भगवान् का राजा दशरथ के पुत्र रूप में अवतरण — को शुकदेव द्वारा राजा परीक्षित को दिए गए भक्तिपूर्ण सार-रूप में समेट लेता है, जिसमें प्रत्येक घटना भगवान् की कृपा, उनके धर्म, और एक आदर्श राजा, पति,

भ्राता एवं पुत्र के रूप में उनके आचरण की पूर्णता की ओर संकेत करती है।

अध्याय-परिचय

- ग्रन्थ: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 9 (नवम स्कन्ध)
- अध्याय: 10 (दशम अध्याय)
- अध्याय शीर्षक: भगवान् रामचन्द्र की लीलाएँ
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी, राजा परीक्षित को कथा सुनाते हुए — सम्पूर्ण कथा सूत गोस्वामी द्वारा नैमिषारण्य में शौनक ऋषि एवं ऋषि-समुदाय को सुनाई गई
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: अयोध्या एवं कोसल राज्य; भगवान् के वनवास के वन; समुद्र-तट एवं लंका
- केन्द्रीय विषय: भगवान् रामचन्द्र का अवतार एवं लीलाएँ — सीता की प्राप्ति, वनवास, सीता का अपहरण एवं पुनर्प्राप्ति, रावण का वध, और राम-राज्य के आदर्श शासन की स्थापना
- मुख्य श्लोक-परास: नवम स्कन्ध, अध्याय 10, श्लोक 1-55
- मुख्य संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

भगवान् दशरथ के पुत्र रूप में अवतरित

शुकदेव ने सूर्यवंश को आगे बढ़ाया: खट्वाङ्ग से दीर्घबाहु, उनसे प्रसिद्ध रघु, रघु से महान् राजा अज, और अज से राजा दशरथ हुए। देवताओं की प्रार्थना पर, स्वयं भगवान् श्री हरि — जो पूर्णतः ब्रह्मस्वरूप हैं — दशरथ के पुत्र बने, चार रूपों में प्रकट होकर श्रीराम, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न के रूप में: भगवान् अपनी पूर्णता में, और उनके भाई उनके अंश रूप में।

तस्यापि भगवानेष साक्षाद् ब्रह्ममयो हरिः ।

अंशांशेन चतुर्धागात् पुत्रत्वं प्रार्थितः सुरैः ।

रामलक्ष्मणभरतशत्रुघ्ना इति संज्ञया ॥ २ ॥

*tasyāpi bhagavān eṣa sākṣād brahmamayo hariḥ aṁśāṁśena caturdhāgāt putratvaṁ prārthitāḥ
suraiḥ rāma-lakṣmaṇa-bharata- śatrughnā iti saṁjñayā*

अर्थ: देवताओं द्वारा प्रार्थित होकर, वही भगवान् हरि, दिव्य एवं ब्रह्मस्वरूप, दशरथ के पुत्र रूप में प्रकट हुए, चार में विस्तृत होकर — स्वयं एवं अपने अंश — राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न नामों से। (नवम स्कन्ध, अध्याय 10, श्लोक 2)

शुकदेव ने बताया कि सीतापति श्रीराम की सम्पूर्ण कथा वाल्मीकि जैसे तत्त्वदर्शी ऋषियों द्वारा पहले ही कही जा चुकी है और परीक्षित बार-बार सुन चुके हैं, इसलिए वे इसे यहाँ भक्तिपूर्ण सार-रूप में देंगे। तत्पश्चात् उन्होंने एक ही व्यापक श्लोक में मंगलाचरण दिया: अपने पिता के लिए भगवान् ने अपना राज्य त्याग दिया और वन-वन में उन चरणकमलों से विचरण किया जो सीता के स्पर्श के लिए भी अति कोमल थे, उनकी थकान हनुमान एवं लक्ष्मण से शान्त होती थी; शूर्पणखा के विरूपण एवं अपनी प्रिया के वियोग से क्रुद्ध होकर, उनकी भौंहों का मात्र तनना समुद्र को भयभीत कर देता था; उन्होंने समुद्र पर सेतु बाँधा और दुष्ट राक्षसों को दावानल के समान भस्म किया। वे कोसलेन्द्र हमारी रक्षा करें।

गुर्वर्थे त्यक्तराज्यो व्यचरदनुवनं पद्मपद्भ्यां प्रियायाः

पाणिस्पर्शक्षमाभ्यां मृजितपथरुजो यो हरीन्द्रानुजाभ्याम् ।

वैरूप्याच्छूर्पणख्याः प्रियविरहरुषारोपितभ्रूविजृम्भ-

त्रस्ताब्धिर्बद्धसेतुः खलदवदहनः कोसलेन्द्रोऽवतान्नः ॥ ४ ॥

*gurv-arthe tyakta-rājyo vyacarad anuvanaṁ padma-padbhyāṁ priyāyāḥ pāṇi-
sparsākṣamābhyāṁ mṛjita-patha-rujo yo harīndrānujābhyāṁ vairūpyāc chūrpaṇakhyāḥ priya-
viraha-ruṣāropita-bhrū-vijṛmbha- trastābdhir baddha-setuḥ khala-dava-dahanaḥ kosalendro
'vatān naḥ*

अर्थ: पिता के वचन के लिए उन्होंने सिंहासन त्याग दिया और वन-वन भटके, उन चरणों से जो अपनी पत्नी के स्पर्श के लिए भी अति सुकुमार थे, हनुमान एवं भ्राता लक्ष्मण से जिनकी थकान दूर होती थी; शूर्पणखा को विरूपित देखकर एवं प्रिया के हरण से क्रुद्ध होकर, उनकी भौंहों की मात्र वक्रता से ही सागर काँप उठा; वे ही, जिन्होंने सागर पर सेतु निर्मित किया और दुष्टों को दावाग्नि-सम भस्म कर डाला — वे कोसलेन्द्र हमारी रक्षा करें। (नवम स्कन्ध, अध्याय 10, श्लोक 4)

शिव का धनुष और सीता की प्राप्ति

अपने बाल्यकाल में भगवान् ने, अकेले ही, मारीच एवं अन्य रात्रिचर राक्षसों को परास्त किया जो ऋषि विश्वामित्र के यज्ञ में विघ्न डालते थे, जबकि लक्ष्मण देखते रहे। तत्पश्चात्, राजकुमारी सीता के स्वयंवर हेतु एकत्र विश्वप्रसिद्ध वीरों की सभा में, उन्होंने भगवान् शिव के प्रचण्ड धनुष को उठाया — जिसे तीन सौ पुरुष उस भवन में लाए थे — उस पर प्रत्यंचा चढ़ाई, खींचा, और उसे बीच से तोड़ डाला, इतनी सहजता से जैसे कोई चंचल गजशिशु गन्ने की छड़ी को तोड़ दे।

यो लोकवीरसमितौ धनुरैशमुग्रं

सीतास्वयंवरगृहे त्रिशतोपनीतम् ।

आदाय बालगजलील इवेक्षुयष्टिं

सज्ज्यीकृतं नृप विकृष्य बभञ्ज मध्ये ॥ ६ ॥

*yo loka-vīra-samitau dhanur aiśam ugraṁ sītā-svayaṁvara-gṛhe triśatopanītam ādāya bāla-gaja-
līla ivekṣu-yaṣṭiṁ sajjiyī-kṛtaṁ nṛpa vikṛṣya babhañja madhye*

अर्थ: विश्व के वीरों की सभा में, सीता के स्वयंवर-भवन में, उन्होंने तीन सौ पुरुषों द्वारा लाए गए भगवान् शिव के भयंकर धनुष को उठाया, उस पर प्रत्यंचा चढ़ाई, और खींचकर उसे बीच से तोड़ डाला — गन्ने की छड़ी को तोड़ते गजशिशु के समान चंचलतापूर्वक। (नवम स्कन्ध, अध्याय 10, श्लोक 6)



सीता के स्वयंवर-भवन में, विश्व के वीरों की सभा के समक्ष, भगवान् राम भगवान् शिव के प्रचण्ड धनुष को उठाते, प्रत्यंचा चढ़ाते और सहज ही तोड़ देते हैं, और सीता का पाणिग्रहण करते हैं (श्लोक 6-7)।

सीता को — जो साक्षात् लक्ष्मी हैं, प्रत्येक गुण, स्वभाव एवं शोभा में उनके अनुरूप — प्राप्त करके, भगवान् ने घर लौटते समय परशुराम के गर्व का शमन किया। बाद में, अपने सत्यवादी पिता की आज्ञा पर, उन्होंने सिर झुकाकर सिंहासन, राजलक्ष्मी, अपने स्वजन, मित्र एवं घर पर अपना दावा त्याग दिया, और अपनी दिव्य पत्नी सहित वन को प्रस्थान किया, उतनी ही शान्ति से जितनी शान्ति से कोई मुक्त आत्मा देह त्याग देती है।

वनवास और सीता का अपहरण

वन में भगवान् ने दुष्ट-मना शूर्पणखा को विरूपित करवाकर दण्ड दिया, और उसके राक्षस बन्धुओं — खर, दूषण, त्रिशिरा एवं चौदह हज़ार अन्यो — का वध किया। तब रावण ने, शूर्पणखा से सीता का वर्णन सुनकर कामातुर होकर, मारीच राक्षस को स्वर्ण-मृग के रूप में भगवान् को दूर ले जाने भेजा; राम ने एक ही बाण से मारीच को मार डाला। उनकी अनुपस्थिति में रावण, राक्षसों में नीचतम, सीता को ऐसे हर ले गया जैसे भेड़िया मेमने को उठा ले जाए। अपनी प्रिया से बिछुड़कर, भगवान् अपने भ्राता सहित वन में एक दिन प्राणी के समान भटके, संसार को उन लोगों की दुखद दशा दिखाते हुए जो प्रेम के विषयों में आसक्त हैं।

रक्षोऽधमेन वृकवद् विपिनेऽसमक्षं
वैदेहराजदुहितर्यपयापितायाम् ।
भ्रात्रा वने कृपणवत् प्रियया वियुक्तः
स्त्रीसङ्गिनां गतिमिति प्रथयंश्चचार ॥ ११ ॥

*rakṣo-'dhamena vṛkavad vipine 'samakṣaṁ vaideha-rāja-duhitary apayāpitāyām bhrātrā vane
kṛpaṇavat priyayā viyuktaḥ strī-saṅginām gatim iti prathayaṁś cacāra*

अर्थ: जब विदेहराज की पुत्री को वन में राक्षसों में नीचतम ने भेड़िये के मेमने को उठा ले जाने के समान हर लिया, तब भगवान्, अपनी प्रिया से बिछुड़कर, अपने भ्राता सहित एक शोकग्रस्त मनुष्य के समान भटके — इस प्रकार उन लोगों की दशा दिखाते हुए जो स्त्री-संग में आसक्त हैं।
(नवम स्कन्ध, अध्याय 10, श्लोक 11)



स्वर्ण-मृग के रूप में मारीच द्वारा दूर ले जाए जाने पर, भगवान् सीता से बिछुड़ जाते हैं, जिन्हें रावण वन-आश्रम से हर ले जाता है — एक ऐसा कर्म जो राक्षसराज के विनाश का कारण बनेगा (श्लोक 9-11)।

मित्रता और समुद्र पर सेतु

भगवान् ने महान् गृध्रराज जटायु का दाह-संस्कार किया, जो उनके लिए रावण से युद्ध करते हुए मारे गए थे, और राक्षस कबन्ध का वध किया। वानरों से मित्रता करके, उन्होंने वाली का वध किया और सुग्रीव की सेना से जाना कि सीता कहाँ बन्दी हैं; तब, यद्यपि उनके चरणों की पूजा ब्रह्मा एवं शिव करते हैं, फिर भी एक मनुष्य के समान आचरण करते हुए, वे वानर-सेनाओं सहित समुद्र-तट पर पहुँचे। जब समुद्र के अधिष्ठाता देवता अन्ततः श्रद्धापूर्वक उनके समक्ष उपस्थित हुए, तब भगवान् ने वानर-प्रमुखों द्वारा उठाए गए पर्वत-शिखरों से समुद्र पर सेतु बँधवाया, और सुग्रीव, नील एवं हनुमान की सेनाओं सहित, विभीषण के मार्गदर्शन में, लंका में प्रवेश किया — जिसे हनुमान पहले ही जला चुके थे।

बद्धोदधौ रघुपतिर्विविधाद्रिकूटैः
सेतुं कपीन्द्रकरकम्पितभूरुहाङ्गैः ।
सुग्रीवनीलहनुमत्प्रमुखैरनीकै-
र्लङ्कां विभीषणदृशाविशदग्रदग्धाम् ॥ १६ ॥

*baddhvodadhau raghu-patir vividhādri-kūṭaiḥ setuṁ kapīndra-kara-kampita-bhūruhāṅgaiḥ
sugrīva-nīla-hanumat-pramukhair anīkair laṅkāṁ vibhīṣaṇa-dṛśāviśad agra-dagdhām*

अर्थ: वानर-प्रमुखों द्वारा हिलाए गए वृक्षों सहित पर्वत-शिखरों को फेंककर सागर पर सेतु खड़ा करने के पश्चात्, रघुकुल-नाथ ने — सुग्रीव, नील एवं हनुमान को सेनापति और विभीषण को पथ-प्रदर्शक बनाकर — उस लंका में पदार्पण किया जिसे हनुमान पहले ही एक बार जला चुके थे।
(नवम स्कन्ध, अध्याय 10, श्लोक 16)



वानर-प्रमुखों द्वारा उठाए गए पर्वत-शिखरों एवं वन-शाखाओं से, रघुपति समुद्र पर महान् सेतु बाँधते हैं और, अपनी मित्र-सेनाओं सहित, लंका पर चढ़ाई करते हैं (श्लोक 15-16)।

रावण का पतन

अपनी सेना के विनाश से क्रुद्ध होकर, रावण अपने विमान पर चढ़कर श्रीराम पर टूट पड़ा, जो इन्द्र के सारथि मातलि द्वारा लाए दिव्य रथ में शोभायमान थे। सीता के कायरतापूर्ण अपहरण के लिए राक्षसराज को फटकारते हुए, भगवान् ने अपने धनुष पर बाण चढ़ाया और छोड़ा; उसने रावण के वज्र-समान हृदय को भेद दिया, और वह राक्षस अपने दस मुखों से रक्त वमन करता हुआ अपने विमान से गिर पड़ा, जबकि उसके लोग शोक से चीत्कार करने लगे।

एवं क्षिपन् धनुषि संधितमुत्ससर्ज
बाणं स वज्रमिव तद्धृदयं बिभेद ।
सोऽसृग् वमन् दशमुखैर्न्यपतद् विमाना-
द्धाहेति जल्पति जने सुकृतीव रिक्तः ॥ २३ ॥

*evam kṣīpan dhanuṣi sandhitam utsasarja bāṇam sa vajram iva tad-dhṛdayam bibheda so 'sṛg
vaman daśa-mukhair nyapatad vimānād dhāheti jalpati jane sukr̥tīva riktaḥ*

अर्थ: इस प्रकार फटकारते हुए, भगवान् ने अपने धनुष पर चढ़ाया बाण छोड़ा, और वज्र के समान उसने रावण के हृदय को भेद दिया; अपने दस मुखों से रक्त वमन करता हुआ वह राक्षस अपने विमान से गिर पड़ा, अपने लोगों के चीत्कार के बीच — एक पुण्यहीन आत्मा के समान जिसका पुण्य समाप्त हो गया हो। (नवम स्कन्ध, अध्याय 10, श्लोक 23)



अपने दिव्य रथ से, भगवान् राम वह बाण छोड़ते हैं जो दशमुख रावण के हृदय को भेद देता है, और तीनों लोकों को राक्षसराज के अत्याचार से मुक्त करते हैं (श्लोक 22-23)।

राम की आज्ञा पर विभीषण ने अपने मारे गए बन्धुओं के अन्त्येष्टि-कर्म किए। भगवान् ने सीता को अशोक वृक्ष के नीचे बैठी पाया, अपने वियोग के शोक से क्षीण, और करुणा से भर उठे। विभीषण को लंका का शासन एवं दीर्घ आयु प्रदान करके, उन्होंने सीता को पुष्पक विमान पर बिठाया और, अपना चौदह वर्ष का वनवास-व्रत अब पूर्ण करके, अपने भाइयों एवं हनुमान सहित अयोध्या को उड़ चले, मार्ग में लोकपालों द्वारा पुष्पों से अभिषिक्त होते हुए।

प्रत्यागमन और भरत की भक्ति

यह जानकर कि उनके भ्राता भरत नन्दिग्राम में एक तपस्वी के समान रहते थे — जटाधारी, भूमि पर शयन करते, भगवान् की चरण-पादुकाओं को सिंहासन पर स्थापित कर उनकी पूजा करते — भगवान् द्रवित हो उठे। अब भरत नगरवासियों, मन्त्रियों एवं पुरोहितों सहित, वेदों के गान एवं संगीत के बीच, उनसे मिलने आए, और अश्रुओं सहित उनके चरणों में गिर पड़े। उनके भक्त सेवकों ने प्रत्येक ने सेवा का एक-एक चिह्न

ग्रहण किया।

पादुके भरतोऽगृह्णाच्चामरव्यजोत्तमे ।

विभीषणः ससुग्रीवः श्वेतच्छत्रं मरुत्सुतः ॥ ४२ ॥

धनुर्निषङ्गाञ्छत्रुघ्नः सीता तीर्थकमण्डलुम् ।

अबिभ्रदङ्गदः खड्गं हैमं चर्मक्षराण्णप ॥ ४३ ॥

pāduke bharato 'grhṇāc cāmara-vyajjanottame vibhīṣaṇaḥ sasugrīvaḥ śveta-cchatraṁ marut-sutaḥ dhanur-niṣaṅgāñ chatrughnaḥ sītā tīrtha-kamaṇḍalum abibhrad aṅgadaḥ khaḍgaṁ haimaṁ carmarkṣa-rāṇ nṛpa

अर्थ: भरत ने भगवान् की चरण-पादुकाएँ धारण कीं; विभीषण एवं सुग्रीव ने श्रेष्ठ चँवर एवं व्यजन; वायुपुत्र हनुमान ने श्वेत छत्र; शत्रुघ्न ने धनुष एवं तरकश; सीता ने तीर्थजल का कमण्डलु; अंगद ने खड्ग; और ऋक्षराज जाम्बवान् ने स्वर्ण-ढाल, हे राजन्। (नवम स्कन्ध, अध्याय 10, श्लोक 42-43)



भक्त भरत, जिन्होंने केवल राम की चरण-पादुकाओं के नाम पर शासन किया था, भगवान् का स्वागत करने नन्दिग्राम से बाहर आते हैं, उनके चरणों में गिरते हैं जबकि सेवक प्रत्येक सेवा का एक-एक चिह्न ग्रहण करते हैं (श्लोक 42-43)।

अयोध्या में भगवान् ने अपनी विमाताओं एवं अपनी माता, अपने गुरुओं एवं वृद्धजनों का सम्मान किया, और उन्होंने बदले में उनका सम्मान किया; माताओं ने, मानो मृत्यु से जीवन में उठकर, अपने पुत्रों को गोद में लिया और अश्रुओं से उनका शोक धो डाला। ऋषि वसिष्ठ एवं रघुवंश के वृद्धजनों ने भगवान् की जटाएँ खुलवाई और उन्हें चारों समुद्रों के जल से स्नान कराया, जैसे बृहस्पति ने कभी इन्द्र को स्नान कराया था।

राम-राज्य का शासन

भरत के प्रणामों से जीते जाकर, भगवान् ने अयोध्या का सिंहासन स्वीकार किया और, एक पिता के समान, अपनी प्रजा की रक्षा की, जिन्होंने बदले में उन्हें अपना पिता माना। जब तक श्रीराम — जो समस्त धर्म के ज्ञाता हैं और प्रत्येक प्राणी को सुख देते हैं — राजा रहे, यद्यपि त्रेता युग था, फिर भी समय स्वयं स्वर्णिम सत्ययुग के समान प्रतीत हुआ।

त्रेतायां वर्तमानायां कालः कृतसमोऽभवत् ।

रामे राजनि धर्मज्ञे सर्वभूतसुखावहे ॥ ५१ ॥

tretāyām vartamānāyām kālaḥ kṛta-samo 'bhavat rāme rājani dharmajñe sarva-bhūta-sukhāvahe

अर्थ: यद्यपि त्रेता युग था, समय स्वर्णिम सत्ययुग के समान हो गया, क्योंकि धर्म के ज्ञाता एवं समस्त प्राणियों को सुख देने वाले राम राजा थे। (नवम स्कन्ध, अध्याय 10, श्लोक 51)

उनके शासन में वन, नदियाँ, पर्वत एवं समुद्र प्रजा की समस्त इच्छाएँ पूर्ण करते थे; शारीरिक एवं मानसिक व्याधियाँ, वृद्धावस्था, शोक, भय एवं थकान अज्ञात थे, और मृत्यु अनिच्छुक को नहीं आती थी। एक ही पत्नी का व्रत धारण करते हुए और राजा होकर भी एक ऋषि के समान आचरण करते हुए, भगवान् ने सावधानीपूर्वक अपने गृहस्थ-कर्तव्यों का पालन किया, केवल अपने ही उदाहरण से संसार को शिक्षा देने हेतु।

एकपत्नीव्रतधरो राजर्षिचरितः शुचिः ।

स्वधर्मं गृहमेधीयं शिक्षयन् स्वयमाचरत् ॥ ५४ ॥

eka-patnī-vrata-dharo rājarṣi-caritaḥ śuciḥ sva-dharmaṁ gṛha-medhīyaṁ śikṣayan svayam ācarat

अर्थ: एक ही पत्नी का व्रत धारण करते हुए, पवित्र, और एक राजर्षि के समान आचरण करते हुए, भगवान् ने संसार को शिक्षा देने हेतु स्वयं गृहस्थ-जीवन के कर्तव्यों का पालन किया। (नवम स्कन्ध, अध्याय 10, श्लोक 54)

भागवत की गहरी शिक्षा यहाँ यह है कि राम-राज्य किसी चतुर प्रशासन का फल कभी नहीं था; वह एक ऐसे शासक का फल था जिसने पहले स्वयं को साधा था। श्रीराम ने अपनी प्रजा के लिए केवल धर्म का विधान नहीं किया — उन्होंने उसे स्वयं जीकर दिखाया, एक ही पत्नी का व्रत एवं अपने साधारण गृहस्थ-कर्तव्यों का उतनी ही निष्ठा से पालन करते हुए जितनी वे अपनी सबसे साधारण प्रजा से चाहते थे। क्योंकि राजा का अपना हृदय पूर्णतः धर्म को समर्पित था, इसलिए स्वयं धरती ने भी उसी भाव से उत्तर दिया — वन, नदियाँ एवं समुद्र सहर्ष अपनी सम्पदा देते थे, और भय, रोग एवं अकाल-मृत्यु की पकड़ भूमि पर से उठ गई। यह शिक्षा त्रेता-युग से आगे भी बनी रहती है: कोई घर, समाज अथवा युग बाहर से थोपे नियमों से नहीं, अपितु एक समर्पित हृदय द्वारा स्थापित उदाहरण से रूपान्तरित होता है, जिसका अनुसरण करने को अन्य स्वतः प्रेरित होते हैं।

इस अध्याय को प्रमुख शिक्षाएँ

1. परम भगवान् प्रेमवश अवतरित होते हैं। श्रीराम केवल एक महान् राजा नहीं बल्कि स्वयं भगवान् हरि हैं, जो देवताओं की प्रार्थना पर दशरथ के पुत्र रूप में आए, अपने कार्य को पृथ्वी पर पूर्ण करने हेतु चार भाइयों में विस्तृत हुए (श्लोक 2, 4)।
2. सिंहासन से ऊपर सत्य एवं कर्तव्य। अपने पिता के वचन के लिए, भगवान् बिना किसी रोष के राज्य त्याग देते हैं और वन को जाते हैं — व्यक्तिगत लाभ से ऊपर धर्म को सम्मान देने का परम उदाहरण (श्लोक 7-8)।
3. बुराई, चाहे कितनी भी शक्तिशाली हो, अपने ही कर्मों से नष्ट होती है। रावण का अत्याचार एवं सीता का अपहरण उसके विनाश का कारण बनते हैं; अन्ततः उसका वज्र-समान हृदय भेद दिया जाता है, यह दशाति हुए कि अधर्म अपने ही विनाश का बीज धारण करता है (श्लोक 22-23)।
4. प्रेममयी सेवा अनेक रूप लेती है। हनुमान, लक्ष्मण, भरत, सुग्रीव, विभीषण एवं अन्य प्रत्येक भगवान् की अपने-अपने ढंग से सेवा करते हैं — भरत तो केवल भगवान् की पादुकाओं के नाम पर शासन करते हैं। भक्ति प्रेम से मापी जाती है, पद से नहीं (श्लोक 42-43)।
5. आदर्श शासन आदर्श शासक से प्रवाहित होता है। राम-राज्य — शोक, रोग एवं भय से मुक्त एक काल, जहाँ प्रकृति प्रचुरता देती है — इसलिए उत्पन्न होता है क्योंकि राजा धर्मात्मा, संयमी एवं सबके कल्याण में समर्पित है। सुशासन एक अच्छे एवं भगवान्-केन्द्रित हृदय से आरम्भ होता है (श्लोक 51-54)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

शुकदेव भगवान् राम का सम्पूर्ण जीवन कुछ ही श्लोकों में दे देते हैं, फिर भी कुछ भी आवश्यक खोया नहीं जाता, क्योंकि कथा का हृदय उसकी घटनाएँ नहीं बल्कि उसका भाव है। यहाँ परम भगवान् बार-बार कठिन एवं उच्चतर मार्ग चुनते हैं: एक पिता के वचन के लिए सिंहासन त्याग देना, हमें आसक्ति की कीमत सिखाने के लिए वियोग की व्यथा सहना, और शक्ति के लिए नहीं बल्कि प्रत्येक प्राणी के सुख के लिए शासन करना। जो प्रकट होता है वह केवल उनकी महिमा ही नहीं बल्कि उनकी कोमलता भी है — वन-पथों के लिए भी अति कोमल चरण, एक शोकग्रस्त भ्राता के लिए अश्रु, एक क्षीण एवं शोकाकुल सीता के लिए करुणा। और उनके चारों ओर प्रेम का एक मण्डल एकत्र होता है: हनुमान जो उनका छत्र धारण करते हैं, भरत जो उनकी पादुकाओं की रक्षा करते हैं, लक्ष्मण जो उनका साथ कभी नहीं छोड़ते। भागवत राम-राज्य को एक खोए स्वर्णिम स्वप्न के रूप में नहीं बल्कि एक जीवित प्रतिज्ञा के रूप में प्रस्तुत करता है — कि जहाँ भी भगवान् सचमुच सिंहासनासीन हों, चाहे किसी राज्य में या किसी एक मानव-हृदय में, वहाँ शोक अपनी पकड़ खो देता है और जीवन वह बन जाता है जो उसे होना था। हमें केवल उनके लिए स्थान बनाना है, जैसे भरत ने बनाया, और अपने हृदय के सिंहासन पर उनका स्थान तैयार रखना है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, भरत की भक्ति की भावना में, भगवान् को अपने जीवन के सच्चे शासक के रूप में सम्मान दें। उनके समक्ष झुकने के लिए एक क्षण अलग रखें — अपने घर के मन्दिर के समक्ष, किसी पवित्र प्रतिमा के, या केवल अपने हृदय के भीतर — और उन्हें अपने दिन के निर्णयों का “सिंहासन” अर्पित करें, यह संकल्प करते हुए कि वैसा ही आचरण करेंगे जैसा वे चाहें: सत्यनिष्ठ, दयालु, और दूसरों के भले के लिए। अपने

कर्तव्यों को करते हुए, मृदुता से दोहराएँ, “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय,” और स्मरण रखें कि साधारण गृह-कार्य भी, उनके लिए एवं दूसरों के लिए उदाहरण रूप में किया गया, पूजा बन जाता है — जैसे स्वयं भगवान् ने संसार को शिक्षा देने हेतु अपने कर्तव्यों का पालन किया। अपने हृदय में राम का यह शान्त सिंहासनारोहण आज आपके घर में राम-राज्य की थोड़ी झलक लाए।

उपसंहार

नवम स्कन्ध का यह दसवाँ अध्याय भगवान् रामचन्द्र के सम्पूर्ण जीवन से एक ही सत्य को निचोड़ देता है: महानता शक्ति से नहीं, अपितु धर्म के प्रति पूर्ण समर्पण से सिद्ध होती है — पुत्र, पति, भ्राता एवं राजा, प्रत्येक रूप में। वन-वनवास से लेकर रावण के पतन तक, प्रत्येक कठिनाई जिसे भगवान् स्वीकार करते हैं, उसी सत्य को और गहरा करती है, और राम-राज्य उसी का फल बनकर खड़ा है — ऐसा शासन जो धर्म को इतना पूर्णतः समर्पित था कि त्रेता-युग भी स्वर्णिम युग के समान प्रतीत हुआ। भरत, हनुमान एवं उनकी सेवा करने वाले सभी की भक्ति में हम वह प्रेम देखते हैं जो ऐसा समर्पण प्रत्येक स्पर्श किए हृदय में जगा देता है। हम भी, भरत के समान, अपने ही हृदय में भगवान् के लिए एक सिंहासन सदा तैयार रखें।

श्रीमद्भागवत का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति को जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ एवं आभार

- मुख्य संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण, नवम स्कन्ध, दशम अध्याय।
- शृंखला: श्रीमद्भागवत विज़डम • विश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं संस्तुति के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण में दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-9-chapter-10-pastimes-of-lord-ramachandra-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज़डम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट